इकाई 4 युद्ध के सिद्धान्त

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 युद्ध क्या है?

4.3 युद्ध के कारणों संबंधी सिद्धान्त
- 4.3.1 प्रणाली-स्तरीय विश्लेषण
- 4.3.2 राज्य-स्तरीय विश्लेषण
- 4.3.3 व्यक्ति-स्तरीय विश्लेषण

4.4 युद्ध का आदर्शवादी दृष्टिकोण

4.5 युद्ध का यथार्थवादी दृष्टिकोण

4.6 युद्ध का मार्क्सवादी दृष्टिकोण

4.7 न्यायसंगत युद्ध

4.8 युद्ध की बदलती प्रकृति

4.9 सारांश

4.10 अभ्यास प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

कूटनीति और प्रचार इत्यादि की भांति युद्ध भी राष्ट्रीय नीति का एक माध्यम है जिसका उपयोग राज्य राष्ट्रीय उद्देश्यों, आशाओं और हितों की पूर्ति के लिए करते रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों को समझने के लिए युद्ध और शांति के प्रश्न अहम हैं क्योंकि इन्हीं के इर्द-गिर्द उत्तरजीविता निर्भर है।

युद्ध क्या है? आज "युद्ध" का प्रयोग कई रूपों में किया जा रहा है। शीत युद्ध, प्रचण्ड युद्ध, सीमित युद्ध, समग्र युद्ध, पारम्परिक व गैर-पारम्परिक युद्ध, गृह युद्ध, छापामार युद्ध, टाला जा सकने वाला युद्ध इत्यादि। युद्ध करने वालों के परिप्रेक्ष्य में इसे साम्राज्यवादी युद्ध अथवा राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए युद्ध भी कहा जाता है। कई सांख्यिकीय विश्लेषणों से पिछली कुछ शताब्दियों के दौरान विश्व में युद्ध के बार-बार घटित होने का पता चलता है। बीसवीं शताब्दी में दो विश्व युद्धों और परमाणु विस्फोट की भयानक त्रासदियों के बावजूद युद्धों में कमी नहीं आई है। यद्यपि बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में महाशक्तियों के बीच शांति बनी रही है तथापि क्षेत्रीय अथवा गृह युद्धों तथा सशस्त्र संघर्षों में वृद्धि हुई है जो वर्ष 2000 में अपने सर्वोच्च स्तर 68 के आंकड़े पर रही। इनमें से अधिकांश संघर्ष कम निचले स्तर के और अन्तर्राज्यीय थे और अधिकांशतः विश्व के विकासशील भागों में हुए। 1968 में इतिहासविदों विल एवं एरियन ड्यूरैंट (Will & Ariel Durant) ने गणना की कि पिछले 3421 वर्षों में केवल 268 वर्ष ही युद्ध मुक्त रहे। ऐसा भी हो सकता है कि उन्होंने कम युद्धों की गणना की हो। निश्चित तौर पर कोई भी वर्ष बिना युद्ध के नहीं बीता होगा।

इस इकाई में युद्ध के दो पहलुओं, युद्ध क्या है और इसके क्या कारण हैं, का विश्लेषण युद्ध के विभिन्न सिद्धान्तों तथा संकल्पनाओं के आधार पर किया गया है। अगली दो इकाइयों में हम विभिन्न प्रकार के युद्धों का अध्ययन करेंगे और यह जानेंगे कि उनका वर्गीकरण इस प्रकार क्यों किया गया है।

4.2 युद्ध क्या है?

आज युद्ध का अर्थ केवल पारम्परिक सैनिक युद्ध नहीं अपितु राजनीतिक और आर्थिक तथा मनावैज्ञानिक युद्ध भी हो सकता है, परन्तु युद्ध की पारम्परिक परिभाषाएं सीमित दृष्टिकोण पर आधारित है। हॉफमैन निक्लरसन (Hoffman Niclerson) ने "एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका" में लिखा है – "युद्ध दो विरोधाभासी नीतियों का अनुपालन करने वाले दो मानव समूहों के मध्य संगठित शक्ति का उपयोग है जिसमें प्रत्येक समूह अपनी नीतियों को दूसरे पर थोपना चाहता है।" जबकि मलिनॉस्की (Malinowski) ने युद्ध को "जनजातीय अथवा राष्ट्रीय नीति की प्राप्ति के लिए संगठित सैन्य बल के द्वारा दो स्वतंत्र राजनीतिक इकाइयों के मध्य सशस्त्र विवाद" के रूप में परिभाषित किया है।

युद्ध के संबंध में कार्ल वॉन क्लॉजविट्ज (Karl von Clausewitz) के तर्क का वर्णन उपयुक्त होगा। उनके अनुसार "युद्ध राजनीतिक संसर्ग का केवल एक भाग है, अतः यह किसी भी प्रकार से अपने आप में स्वतंत्र नहीं है। युद्ध का अर्थ अन्य माध्यमों के साथ-साथ राजनीतिक संसर्ग को जारी रखने से है।" इस परिभाषा से युद्ध की व्यापकता को समझने में सहायता मिलेगी।

क्विन्सी राइट (QuincyWright) ने माना है कि युद्ध कूटनीतिक, आर्थिक और प्रचार के साथ-साथ सैनिक स्तर पर लड़ा जाता है और युद्ध कला में इन सभी तत्वों का समन्वय विजय के उद्देश्य से किया जाता है। उन्होंने यह भी तर्क दिया है कि संकीर्ण अर्थों में युद्ध कला केवल सैनिक पहलू तक सीमित है। इसमें सशस्त्र बलों के मनोबल को संगठित करना, अनुशासित करना और इसे बनाए रखना (हथियारों की खोज, विकास और प्रतिप्राप्ति), सेना की आवाजाही का प्रावधान (युद्ध संबंधी प्रचार नीतियां तथा युद्ध नीतियां) इत्यादि शामिल हैं। सैनिक नीति की वृहत समस्याओं जैसे राष्ट्रीय नीति, राष्ट्रीय सार्वजनिक विचार, अर्थव्यवस्था, कूटनीति इत्यादि का निर्धारण अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के अंतर्गत आता है।

4.3 युद्ध के कारणों संबंधी सिद्धान्त

युद्ध के कारणों की जांच के संबंध में कई अध्ययन किए गए हैं परन्तु इस पर भी विद्वान एकमत नहीं है जिसका प्रमुख कारण तात्कालिक और दीर्घावधि अथवा अप्रत्यक्ष कारणों में विभेद न हो पाने के कारण अस्पष्टता है। कई मामलों में विश्लेषण सैद्धान्तिक आधार पर किया गया है और एक ही कारण पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। कुछ कारण तत्काल होते हैं जबकि कुछ मूल। कुछ देशों की कुछ विशिष्ट घटनाओं तथा कार्यों से संबंधित होते हैं जबकि कई बार विभिन्न शक्तियां और अप्रत्यक्ष कारण युद्ध के लिए जिम्मेदार होते हैं। प्रत्येक कारण की गहराई तक पहुंचा जाना चाहिए। अतः इस प्रश्न का कोई अंतिम उत्तर नहीं हो सकता कि युद्ध का कारण क्या है?

सामान्यतया युद्ध के कारणों को राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक कारणों में वर्गीकृत किया जाता है। क्विन्सी राइट (Quincy Wright) के अनुसार युद्ध के कारणों का कई दृष्टिकोणों से अध्ययन किया जाना चाहिए। युद्ध के राजनीतिक-प्रौद्योगिकीय, वैधिक-सैद्धान्तिक, सामाजिक-धार्मिक तथा मनोवैज्ञानिक-आर्थिक कारण होते हैं। मार्क्सवादी मान्यताओं के अनुसार राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए लड़े जाने वाले युद्धों में विभेद किया गया है। युद्ध के मूल कारण पूंजीवाद और साम्राज्यवाद में निहित हैं जबकि अन्य विद्वान मनोवैज्ञानिक कारणों तथा राष्ट्रों की असुरक्षा की भावना को कारण मानते हैं। मार्क्सवादी कुछ अन्य प्रकार के युद्धों में अंतर बताते हैं। वे हैं: साम्राज्यवादी युद्ध, क्रांतिकारी युद्ध तथा राष्ट्रीय स्वाधीनता के लिए युद्ध। युद्ध के कारण राष्ट्रीय नीति के माध्यम के रूप में युद्ध से संबंधित रहते हैं क्योंकि युद्ध राष्ट्रीय उद्देश्यों, लक्ष्यों और आकांक्षाओं के रक्षोपाय के रूप में लड़े जाते हैं। उनका संबंध भूखंड से, या पहचान से, फिर राष्ट्र-राज्य की उत्तरजीविता हो सकता है।

युद्ध के कारणों से संबंधित सैद्धान्तिक दृष्टिकोण विश्लेषण के निम्नलिखित स्तरों पर आधारित है: (1) प्रणाली-स्तरीय, (2) राज्य-स्तरीय; और (3) व्यक्ति-स्तरीय कारण।

4.3.1 प्रणाली-स्तरीय विश्लेषण

प्रणाली स्तरीय विश्लेषण में विश्व राजनीति का अध्ययन करने के लिए "ऊपर से नीचे" के दृष्टिकोण को अपनाया जाता है। इसका प्रमुख तर्क यह है कि राज्य तथा गैर-राज्य कर्ता वैश्विक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक, भौगोलिक पर्यावरण में कार्य करते हैं तथा प्रणाली की विशेषताएं युद्ध निर्णयकर्ताओं के व्यवहार का निर्धारण करती हैं। प्रणाली के कार्यकलापों पर चार कारक प्रभाव डालते हैं : प्रणाली की संरचनात्मक विशेषताएं; प्रणाली के विभिन्न सदस्यों के सत्ता संबंध; प्रणाली की आर्थिक वास्तविकताएं तथा कर्ताओं के व्यवहार को "संचालित" करने की संभावना वाले मानदण्ड और परम्पराएं।

प्रणाली के संरचनात्मक कारकों का संबंध प्रणाली के भीतर कर्ताओं के मध्य सत्ता और परस्पर सम्पर्क के स्तर के संगठन से है। अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली सत्ता की लम्बवत प्रणाली नहीं है बल्कि इसे "अराजकतापूर्ण" कहा जा सकता है, जहां अराजकता से अभिप्राय केन्द्रीकृत अंतर्राष्ट्रीय प्राधिकारी का न होना तथा अपने राष्ट्रीय हितों की इच्छा रखने वाले प्रभुसत्ता-सम्पन्न राष्ट्रों की मौजूदगी है। आज अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में अहम भूमिका निभाने वाले गैर-राज्य कर्ताओं की मौजूदगी को पहचानने की आवश्यकता है। एमनेस्टी इंटरनैशनल अथवा ग्रीन पीस जैसी कई गैर-राज्य संस्थाओं ने मानवधिकार तथा पर्यावरण के क्षेत्रों में अहम भूमिका निभाई है। अब आतंकवादी संगठनों को भी गैर-राज्य कर्ताओं की श्रेणी में रखा जा रहा है। कुछ प्रमुख गैर-राज्य कर्ताओं में अंतर्राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय संकाय जैसे विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू टी ओ) अथवा क्षेत्रीय आर्थिक/व्यापार ब्लॉक जैसे एपेक (EPEC), यूरोपीय संघ इत्यादि शामिल हैं। पिछले कुछ वर्षों से राज्य तथा गैर-राज्य शक्तियों के बीच परस्पर सम्पर्क बढ़ा है जोकि प्रमुखतः गैर सैनिक क्षेत्रों जैसे आर्थिक, सामाजिक और मानवतावादी क्षेत्रों में है।

प्रणाली के भीतर सत्ता संबंध से अभिप्राय शक्तियों के वितरण से है। आज हम विश्व युद्ध से पूर्व के यूरोपीय वर्चस्व वाले युग से गुजरकर संयुक्त राज्य अमेरिका–सोवियत संघ के शीत युद्ध के वर्षों के द्विध्रुवीय विश्व से होते हुए सोवियत संघ के विघटन के बाद के अमेरिका प्रधान युग में हैं। इस प्रकार से शक्ति संबंधों के बदलने और परिणामस्वरूप विश्व में शक्ति संतुलन में परिवर्तन अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों की सतत वास्तविकता है।

आर्थिक वास्तविकता से अभिप्राय किसी देश के प्राकृतिक संसाधनों और उसके आर्थिक व औद्योगिक विकास से है। विश्व का उत्तर-दक्षिण में वर्गीकरण उत्तर के विकसित विश्व तथा दक्षिण की विकासशील (अथवा अल्प विकसित) आर्थिक वास्तविकताओं के आधार पर किया गया है। यह सत्य है कि आज हम आर्थिक रूप से परस्पर-निर्भर विश्व के बाशिंदे हैं किन्तु विकसित केन्द्र के वर्चस्व से नकारा नहीं जा सकता। आज संघर्ष केवल कम संसाधनों पर नहीं अपितु विश्व के उपलब्ध संसाधनों के नियंत्रण को लेकर भी है। उपनिवेशवाद के इतिहास को नियन्त्रण करने की आर्थिक वास्तविकताओं के रूप में समझा जा सकता है। उदाहरण के तौर पर आज के विश्व में तेल प्रमुख आर्थिक माध्यम के रूप में उभरा है।

विश्व व्यवस्था के संचालन में मानदण्ड तथा परम्पराएं कितनी अहम हैं, यह अत्यंत विवादास्पद विषय रहा है। आम धारणा यह है कि राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों को तब तक नहीं छेड़ते जब तक कि कोई मजबूरी न हो। इराक युद्ध (2003) के संबंध में यह चर्चा का विषय रहा है कि क्या संयुक्त राज्य अमेरिका और ब्रिटेन ने इराक के विरूद्ध युद्ध छेड़कर संयुक्त राष्ट्र के अंतर्राष्ट्रीय मानदण्डों का उल्लंघन किया है?

अतः, प्रणाली स्तरीय विश्लेषण में युद्ध के कारणों के रूप में निम्नलिखित मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है:

i) सत्ता का वितरण: तुलनात्मक सत्ता तथा सत्ता विहीनता, शक्ति संतुलन की राजनीति से संबंध इत्यादि को युद्ध के संभावित कारण माना गया है।

ii) अन्तर्राष्ट्रीय प्रणाली की अराजकतावादी प्रकृति को भी युद्ध का कारण माना गया है। किसी केन्द्रीकृत शक्ति के न होने के कारण राष्ट्रों में पनपी असुरक्षा की भावना युद्ध का रूप ले सकती है। विकासशील विश्व की परमाणु अस्त्र नीति को इसी असुरक्षा की भावना को दूर करने के माध्यम के रूप में समझा जा सकता है।

iii) आर्थिक स्तर पर तेल व प्राकृतिक गैस और प्रमुख खनिजों को आधुनिक विश्व के विवादों के संभावित स्रोत के रूप में देखा जाता है। ईरान–इराक युद्ध, तथा इराक में अमेरिकी हमले को कई बार तेल की राजनीति के ढांचे में देखा जाता है।

iv) सैम्युल हंटिंगटन (Samuel Huntington) की सभ्यताओं में संघर्ष की संकल्पना युद्धों के क्रमबद्ध परिप्रेक्ष्य से जुड़ी है। इसका प्रमुख मत है कि भावी युद्धों के प्रमुख कारण नृजातीय-धार्मिक होंगे और इस प्रकार से सभ्यतापरक होंगे, न कि राज्यपरक।

4.3.2 राज्य-स्तरीय विश्लेषण

राज्य-स्तरीय विश्लेषण में राष्ट्र-राज्य तथा विश्व राजनीति के प्रमुख निर्धारक के रूप में राज्य की आंतरिक प्रक्रिया पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। यह अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के मामले में राज्यपरक दृष्टिकोण है। पूर्ववर्ती राज्य स्तरीय विश्लेषणों की मान्यता थी कि राज्य अपनी प्रणाली की विवशताओं का परिणाम थी परन्तु यह दृष्टिकोण भी इस मान्यता पर आधारित है कि निर्णय लेने में राज्य कहीं अधिक स्वतंत्र हैं।

नीति निर्माण में संरचनात्मक तथा गैर-संरचनात्मक दोनों निर्धारक तत्व होते हैं। संरचनात्मक का अर्थ सरकार की प्रकृति से है जबकि गैर-संरचनात्मकता से अभिप्राय राज्य की ऐतिहासिक और राजनीतिक संस्कृति से है। अधिनायकवादी तथा लोकतांत्रिक सरकारों के नीति-निर्धारण में अंतर है। इसी प्रकार से शांति तथा युद्ध के समय की नीतियां भी भिन्न होती है।

राज्य स्तरीय विश्लेषण में युद्ध के कारण निम्नलिखित परिस्थितियों में निहित होते हैं:

i) इस स्तर पर राष्ट्रीय हित सर्वोच्च होता है और यह दो स्तरों पर कार्य करता है—प्रथम, शत्रु द्वारा आक्रमण की स्थिति में राष्ट्र-राज्य की अस्मिता सुनिश्चित करने के लिए युद्ध, और द्वितीय स्तर विस्तारवादी राष्ट्रीय हित का है जहां सीमाओं के विस्तार को सुरक्षा से जुड़ा राष्ट्रीय हित माना जाता है। इज़राइल में दोनों प्रकार की स्थितियां हैं। 1948 के युद्ध को अस्मिता के युद्ध तथा 1967 और 1973 के युद्धों को सुरक्षा कारणों से सीमा विस्तार के रूप में देखा जा सकता है।

ii) घरेलू तथा विदेशी नीतियों में ससंपर्क स्थापित किया जाता है। कई बार यह तर्क दिया जाता है कि राष्ट्र घरेलू परिस्थितियों से ध्यान हटाने के लिए युद्ध का सहारा लेते हैं।

iii) एक अन्य विश्लेषण में किसी देश में देश की प्रकृति और उसके आक्रामक हो जाने की संभावना के बीच संपर्क पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। इस संबंध में यह तर्क दिया गया है कि अधिनायकवादी देशों की तुलना में लोकतांत्रिक देश युद्ध की ओर कम अग्रसर होते हैं।

4.4.3 व्यक्ति-स्तरीय विश्लेषण

यूनेस्को का मूल मंत्र है – "चूंकि युद्ध मनुष्यों के दिमाग की उपज है अतः मनुष्य के दिमाग में ही शांति के रक्षा-कवचों का निर्माण किया जाना चाहिए।" व्यक्ति स्तरीय विश्लेषण में मानव प्रकृति और इस प्रकार निर्णय लेने में अहम मनोवैज्ञानिक कारकों पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। इसके साथ ही मनुष्य की आक्रामक प्रवृत्ति को समझने के लिए जैविक कारकों का अध्ययन आवश्यक है। क्या आक्रामकता मनुष्य का स्वभाव है? यह प्रश्न बार-बार पूछा जाता है। जैव-राजनीति में भौतिक प्रकृति और राजनीतिक व्यवहार के संबंधों का अध्ययन किया जाता है। यहां अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में नारीवादी दृष्टिकोण का उल्लेख करना भी उपयुक्त होगा जिसमें यह तर्क दिया जाता है कि आक्रामक मानव व्यवहार मूलतः पुरुष प्रवृत्ति है।

सामूहिक व्यवहार से संबंधित व्यक्ति स्तरीय विश्लेषण का एक और पहलू है कि भीड़ हिंसक क्यों हो जाती है? यह तर्क दिया जाता है कि कोई व्यक्ति आक्रामक प्रवृत्ति का इतना प्रदर्शन नहीं करता जितना कि दंगा कर रही भीड़ का हिस्सा बनने पर वह नृशंसता के स्तर पर उतर आता है।

इस स्तर के विश्लेषण का सर्वाधिक उल्लेखनीय रूप नेतृत्व व्यवहार के संदर्भ में देखा जाता है। क्यूबा प्रक्षेपास्त्र संकट के समय अमरीकी राष्ट्रपति जॉन एफ कैनेडी 1965 के भारत-पाक युद्ध के दौरान भारत के प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री (बांग्लादेश युद्ध के संदर्भ में इंदिरा गांधी का अध्ययन नेतृत्व व्यवहार को समझने के प्रयास का हिस्सा है। इसी प्रकार से इज़राइल के संदर्भ में मिस्र के राष्ट्रपति अनवर सादत के शांति प्रयास) राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन द्वारा चीन के साथ बातचीत आरम्भ करने अथवा हेनरी किसिंगर की शटल कूटनीति नेतृत्व व्यवहार के उदाहरण हैं।

व्यक्ति के स्तर पर युद्ध के कारण निम्नलिखित स्थितियों में निहित हैं :

1) नेतृत्व के द्वारा लिया गया तर्कसंगत निर्णय तथा राष्ट्र हित की रक्षा के लिए जानबूझकर लिए गए निर्णय प्रमुख कारण हैं। यहां तर्क यह दिया जाता है कि यदि युद्ध की स्थिति बन भी जाए तो भी अंतिम निर्णय तो एक नेता द्वारा ही लिया जाएगा, जैसा कि राष्ट्रपति कैनेडी ने तर्क दिया था कि " यहाँ आकर उत्तरदायित्व समाप्त हो जाता है" **(buck stops here)**।

2) इसका विपरीत सिद्धान्त तर्कसंगतता के तर्क पर ही प्रश्न चिह्न लगाता है। युद्ध करने का निर्णय नेतृत्व का नितान्त अतर्कसंगत निर्णय हो सकता है।

3) कई जीव-वैज्ञानिक युद्ध का मूल कारण मानव की आक्रामक प्रवृत्तियों को मानते हैं। यह सिद्धान्त पशु प्रयोगों पर आधारित है। डार्विन के इस विषय पर लिखने के बाद इस क्षेत्र में काफी साहित्य रचना हुई है।

4) मनोवैज्ञानिक हताशा, गलत धारणा तथा मनोस्थिति में परिवर्तन का अध्ययन आक्रामक व्यवहार के मूल कारण के रूप में किया जाता है। उदाहरण के तौर पर, फ्रायड अपनी मान्यता मनुष्य की हिंसा अथवा विनाश प्रवृत्ति पर केन्द्रित करते हैं जिसे प्रेम अथवा जीवन की प्रवृत्ति संतुलित करते हैं।

4.4 युद्ध का आदर्शवादी दृष्टिकोण

राजनीतिक आदर्शवाद दो विश्व के युद्धों के मध्य के वर्षों के दौरान अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में उभर कर आया। राजनीतिक आदर्शवादियों का मानना था कि मनुष्य प्राकृतिक रूप से अच्छा प्राणी है और वह अपने तथा दूसरे का सामान्यतया हित चाहता है। उनका यह भी मत था कि विश्व के संरचनात्मक तथा संस्थागत

प्रबंधों के कारण मनुष्य का व्यवहार बुरा हो जाता है। उनके अनुसार, युद्ध को टाला नहीं जा सकता और यह खराब संरचनात्मक प्रबंधों का परिणाम है।

अतः आदर्शवादियों का तर्क था कि उपयुक्त अन्तर्राष्ट्रीय संरचनाएं विकसित कर युद्ध रोका जा सकता है। ये संरचनाएं सहकारी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएं थीं। प्रथम विश्व युद्ध के उपरांत "राष्ट्र संघ" का गठन इस दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास था। सामूहिक सुरक्षा की सैद्धान्तिक प्रणाली को अपनाकर युद्धों से बचा जा सकता है जिसके लिए सामूहिक प्रयासों और सभी सदस्य राज्यों की निष्ठा की आवश्यकता होती है। कई आदर्शवादी विचारक युद्ध टालने के माध्यम के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय कानून के पक्षधर थे। राष्ट्रों को युद्ध न करने के लिए राष्ट्रीय नीति बनानी होगी जबकि अन्य आदर्शवादी चिन्तकों के अनुसार सशस्त्रीकरण की होड़ सभी विवादों की जड़ है जिसके कारण उन्होंने प्रणालीगत ढंग से सशस्त्रीकरण पर रोक लगाने और निरस्त्रीकरण की नीति अपनाने का समर्थन किया है।

4.5 युद्ध का यथार्थवादी दृष्टिकोण

"राष्ट्र संघ" की विफलता और द्वितीय विश्व युद्ध की ओर धीरे–धीरे, परन्तु निश्चित तौर, पर बढ़ रहे कदमों के कारण आदर्शवादी दृष्टिकोण की आलोचना हुई। आदर्शवादी दृष्टिकोण के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय कानून, अन्तर्राष्ट्रीय संगठन तथा परस्पर निर्भरता और सहयोग अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों की प्रमुख विशेषताएं मानी गईं जबकि यथार्थवादियों ने शक्ति की राजनीति, राष्ट्रों के सुरक्षा मुद्दों, आक्रामकता, विवाद और युद्ध पर बल दिया।

हंस मोर्गेनथाऊ (Hence Morgainthou) के यथार्थवाद के छह सिद्धान्त यथार्थवाद की स्थिति की स्पष्ट तस्वीर प्रस्तुत करते हैं। ये सिद्धान्त संक्षेप में इस प्रकार हैं :

- राजनीति का मूल स्थायी और अपरिवर्तनशील मानव प्रकृति है जोकि मूलतः अपने में स्व-केन्द्रित, स्व-संबंधी तथा स्व-हित भी है।
- राजनीति का मूल शक्ति के लिए संघर्ष है। इसी प्रकार से अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की विशेषता राज्यों के बीच में राष्ट्रीय शक्ति के लिए संघर्ष है।
- यद्यपि राज्य की शक्ति का रूप और प्रकृति निर्धारित नहीं है तथा समय, स्थान और परिस्थिति के अनुसार इनमें परिवर्तन आता रहता है परन्तु हित की परिसंकल्पना सदैव बनी रहती है।
- व्यक्ति विशेष पर नैतिक प्रभाव पड़ते हैं परन्तु राज्य नैतिक एजेन्ट नहीं है क्योंकि उनके कार्यों का मूल्यांकन राष्ट्रीय उत्तरजीविता के मापदण्ड के अनुसार किया जाता है।
- यद्यपि राज्य अपने व्यवहार को नैतिकता का जामा पहनाने की कोशिश करते हैं तथापि इनका उद्देश्य लाभ प्राप्ति और वैधता प्राप्त करना तथा राज्य के राष्ट्रीय हित को आगे बढ़ाना है।
- राजनीतिक क्षेत्र मानव संबंधी किसी भी अन्य क्षेत्र से स्वायत्त है। इसके सोच के अपने मानक हैं और राज्य के व्यवहार का विश्लेषण करने के मापदण्ड हैं।

उनका तर्क है कि राष्ट्रीय हित की संकल्पना में न तो प्राकृतिक रूप से सौहार्दपूर्ण विश्व और न ही युद्ध की सुनिश्चितता की मान्यता है। यदि सभी राष्ट्र अपने-अपने राष्ट्र हित को देखें तो भी "शक्ति संतुलनों" के कारण प्रमुख समस्याएं न पनपने से व्यवस्था तुलनात्मक रूप से स्थिर होगी। यथार्थवादी सक्षम सैनिक बल तथा राष्ट्रवाद पर अधिक ध्यान देने का तर्क देते हैं। उनके अनुसार राष्ट्र-राज्य प्रमुख हैं तथा राष्ट्रीय सुरक्षा सबसे महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दा है। यथार्थवाद तथा नवायथार्थवाद में अन्तर यह

है कि नव-यथार्थवादियों के अनुसार राज्य को शक्ति की लालसा रहती है और वे सुरक्षा के प्रति जागरूक होते हैं परन्तु ऐसा उनकी मानव प्रकृति के कारण नहीं अपितु अन्तर्राष्ट्रीय प्रणाली की संरचना के कारण होता है। इस प्रकार से राज्य के नेता और अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों का उनका व्यक्तिपरक विश्लेषण यथार्थवादी सिद्धान्त का मूल मुद्दा है। नवा-यथार्थवाद में प्रणाली के अन्तर्राष्ट्रीय ढांचे पर ध्यान दिया जाता है विशेषकर शक्ति के सापेक्षिक वितरण पर। इसके कर्ता कम महत्वपूर्ण होते हैं क्योंकि संरचना उन्हें विशेष प्रकार से कार्य करने के लिए बाध्य करती है।

4.6 युद्ध का मार्क्सवादी दृष्टिकोण

युद्ध के मार्क्सवादी दृष्टिकोण के अनुसार राज्य स्वायत इकाइयां नहीं हैं, उन पर सत्ताधारी वर्ग के हित हावी रहते हैं और पूंजीवादी राज्य प्रमुखतः अपने पूंजीपति वर्ग के हितों की रक्षा करना अपना धर्म मानते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि राज्यों के बीच संघर्ष को विभिन्न राज्यों के पूंजीपति वर्गों के बीच प्रतियोगिता के आर्थिक संदर्भ में देखा जाना चाहिए। मार्क्सवादियों के अनुसार राज्य संघर्ष की अपेक्षा, वर्ग संघर्ष युद्ध का अधिक मूलभूत वास्तविक कारण है।

मार्क्सवादी विश्लेषण के अनुसार राजनीति का निर्धारण शोषक राज्य की सामाजिक-आर्थिक प्रणाली के रूप में उभरे विभिन्न वर्गों के प्रमुख हितों से होता है। इसी प्रणाली के कारण युद्ध होते हैं। प्रथम तथा द्वितीय विश्व युद्ध पूंजीवाद में निहित सामाजिक विरोध का परिणाम थे तथा पूंजीवादी राज्यों के कारण पूंजीवाद कई द्वेषपूर्ण संगठनों में विभक्त हो गया। विश्व युद्धों की समाप्ति पर दो विरोधी सामाजिक प्रणालियों के बीच प्रमुख विरोधाभास था – पूंजीवाद व समाजवाद। इनमें मूलतः वर्ग विरोध था जिसका सभी अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं पर प्रभाव पड़ा।

मार्क्सवादियों ने पूंजीवाद की विस्तारवादी प्रकृति की ओर भी ध्यान केन्द्रित किया है जिसने शताब्दी के आरम्भिक वर्षों में साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद का रूप ले लिया था। उत्तर-औपनिवेशिक काल में यह परा-राष्ट्रीय निगमों के माध्यम से आर्थिक वैश्वीकरण का रूप ले चुका है।

4.7 न्यायसंगत युद्ध

कोई युद्ध कब न्यायसंगत होता है? किन परिस्थितियों में विधि, नीतिशास्त्र तथा नैतिक सिद्धान्त आक्रामकता को न्यायसंगत ठहराते हैं? माइकल वैल्ज़र (Michel Velger) ने आक्रामकता के सिद्धान्त को छह प्रस्तावों के रूप में प्रस्तुत किया है :

क) स्वतंत्र राज्यों का अन्तर्राष्ट्रीय समाज है जोकि प्रभुसत्ता सम्पन्न है। राष्ट्रों के अन्तर्राष्ट्रीय समाज के सदस्य राष्ट्र होते हैं न कि नागरिक।

ख) इस अन्तर्राष्ट्रीय समाज का कानून होता है जोकि अपने सदस्य और इन सबसे बढ़कर क्षेत्रीय एकता और राजनीतिक संप्रभुता के अधिकार तय करता है।

ग) किसी राज्य द्वारा किसी अन्य राजनीतिक संप्रभुता अथवा अन्य की क्षेत्रीय एकता के विरूद्ध बल प्रयोग अथवा बल प्रयोग की आसन्न धमकी आक्रामकता मानी जाएगी तथा यह आपराधिक कार्य है। इसमें सीमा में घुसपैठ तथा आक्रमण पर ध्यान केन्द्रित किया गया है (आधुनिक युग में इसमें कम सघनता वाली संघर्ष अवस्थाएं जैसे – स्थानीयकृत संघर्ष का रूप लेने वाले जन विद्रोह और विसम्मति आंदोलन शामिल हैं)।

घ) आक्रामकता के अन्तर्गत दो प्रकार की हिंसक प्रतिक्रियाओं को न्यायसंगत ठहराया गया है : युद्ध थोपे जाने पर स्वयं रक्षा के लिए युद्ध तथा उसके द्वारा अथवा अन्तर्राष्ट्रीय समाज के किसी सदस्य द्वारा कानून लागू करने के लिए युद्ध। इस सिद्धान्त में यह पूर्वधारणा रहती है कि आक्रामकता के विरूद्ध युद्धात्मक प्रतिक्रिया आवश्यक नहीं कि संबंधित समूह से हो अपितु यह किसी भी ऐसे राज्य से हो सकती है जो अन्तर्राष्ट्रीय समाज में स्थिरता की वापसी के लिए विवश हो।

ड.) केवल आक्रामकता युद्ध को न्यायसंगत ठहरा सकती है। इस सिद्धान्त का प्रमुख उद्देश्य युद्ध के अवसर कम करने से है। बल प्रयोग को न्यायसंगत ठहराने के लिए अवश्य कुछ गलती हुई होगी और यह गलती परिणामतः दूसरे तक पहुंची होगी।

च) आक्रामक राज्य को सैन्य बल से पीछे धकेलने के उपरांत उसे दंड भी दिया जा सकता है। दंड के रूप में न्यायसंगत युद्ध की परिकल्पना पुरानी है परन्तु पारम्परिक अथवा सकारात्मक अन्तर्राष्ट्रीय कानून में कभी भी दंड की प्रक्रिया अथवा रूप निर्धारित नहीं किए गए। इस प्रकार की सजा के उद्देश्य भी नहीं बताए गए हैं – क्या यह प्रतिशोध के लिए है, किसी दूसरे राज्य को सबक सिखाने के लिए है अथवा मूल आक्रामक को सुधारने के लिए?

4.8 युद्ध की बदलती प्रकृति

युद्ध को समझने के लिए अपनाए जाने वाले दृष्टिकोणों में परिवर्तन के दो कारक हैं: राष्ट्रवाद की भूमिका तथा प्रौद्योगिकीय क्रान्ति। पहले का संबंध युद्ध के सैद्धान्तिक पक्ष से है जबकि दूसरा युद्ध में उपयोग में लाए जाने वाले उपकरण प्रदान करने से संबंधित है। प्रौद्योगिकी में परिवर्तन का युद्ध की रणनीति और युक्तियों पर तत्काल प्रभाव पड़ा है। इस इकाई में इस पर हम इसकी व्यापक चर्चा नहीं करेंगे।

19वीं शताब्दी में यूरोप में निरन्तर संघर्ष का कारण नृजातीय राष्ट्रवाद पर आधारित आत्म-निर्णय का अधिकार रहा है। अन्तर्युद्ध के वर्षों में उपयोग में लाई गई आत्म-निर्णय की परिकल्पना को वुडरो विल्सन (Woodro Wilson) के 14 सूत्रों से स्पष्ट पहचान मिली। सोवियत युग के उपरांत इसी सिद्धान्त के आधार पर नए राज्यों के उभरने से इस परिकल्पना को हाल ही में पुनः वैधता मिली है। सोवियत राज्यों के विघटन की प्रक्रिया तथा नए राज्यों को वैधता नृजातीय राष्ट्रवाद और आत्म-निर्णय के सिद्धान्त पर मिली। चेकोस्लोवाकिया तथा यूगोस्लाविया के विघटन तथा जर्मनी के एक होने की प्रक्रिया को वैध बनाने के लिए भी इसी सिद्धान्त को उपयोग में लाया गया। विश्व के कई पृथकतावादी आंदोलन अपने संघर्ष को राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कहने में इसे सैद्धान्तिक आधार के रूप में उपयोग में लाते हैं।

राष्ट्रवाद की परिकल्पना प्रणाली राज्य और व्यक्ति के स्तर पर युद्ध के विश्लेषण से कहीं बढ़कर है। इसे पहचान मिल रही है और आगामी वर्षों में युद्ध को समझने के दृष्टिकोणों में इसका वर्चस्व बने रहने की संभावना है।

किसी स्तर पर किसी अन्यायसंगत सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था को बदलने के लिए किए जाने वाले युद्ध को न्यायसंगत ठहराया जाता है। इस मामले में आक्रामकता प्रत्यक्ष सैनिक आक्रमण तक सीमित नहीं होती अपितु आंतरिक मामलों में भी इसका दखल होता है। यह अधिकार तभी वैध है जबकि इसका उद्देश्य अन्याय दूर करना हो। अन्याय को अधिकांशतः मानवाधिकारों का उल्लंघन करने के रूप में देखा जाता है। न्यायसंगत कारणों से संबंधित सिद्धान्त अन्याय दूर करने की आवश्यकता पर आधारित हैं। यह अत्याचार का विरोध करने के सिद्धान्त से अच्छी तरह से जुड़ा है। अत्याचार विरोध तथा आत्म-निर्णय के अधिकार के बीच सशक्त आंतरिक संबंध है। आत्म-निर्णय का अधिकार मानवाधिकारों के अन्तर्गत आता है। इस अधिकार के उपयोग के आधार हैं – (क) किसी समूह पर अत्याचार हुआ है,

प्रणालीगत भेदभाव अथवा शोषण हुआ हो, (ख) क्षेत्र पर गैर कानूनी ढंग से अधिकार, (ग) क्षेत्र पर पुख्ता दावा हो, (घ) समुदाय की संस्कृति को खतरा हो, (ड.) संवैधानिक उपायों की अनुपस्थिति।

उपरोक्त कुछ दृष्टिकोण संघर्ष के परोक्ष कारणों की जांच में सहायक हो सकते हैं, जबकि कुछ संकट के व्यवहार की व्याख्या कर सकते हैं। ये सैद्धान्तिक दृष्टिकोण युद्ध की प्रकृति को समझने में सहायक हैं। आगे के इकाइयों में युद्ध के विभिन्न प्रकारों का अध्ययन किया जाएगा।

4.9 सारांश

युद्ध अपेक्षाकृत लोगों के बड़े समूहों के बीच संघर्ष है जिसमें हथियारों के प्रयोग के माध्यम से शारीरिक बल शामिल होता है। हमने इस मूल परिकल्पना से आरम्भ किया कि युद्ध राष्ट्रीय नीति का माध्यम है और बाद में यह पाया कि यद्यपि युद्ध कूटनीति, राजनीति तथा प्रचार के स्तर पर लड़ा जाता है तथापि युद्ध का पारम्परिक सैनिक पहलू शान्ति और संघर्ष के अध्ययनों में चर्चा का विषय रहा है। इस इकाई में हमने प्रणाली, राज्य और व्यक्ति स्तर के विश्लेषण के आधार पर युद्ध के कारणों की समीक्षा की है। प्रणाली के स्तर पर विश्लेषण के अंतर्गत वैश्विक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक, भौगोलिक पर्यावरण पर ध्यान केन्द्रित किया गया जिसमें राज्य और गैर-राज्य के कार्यशील तत्व कार्य करते हैं। दूसरी ओर राज्य स्तर के विश्लेषण में राष्ट्र-राज्य और राज्य की आतंरिक प्रक्रिया पर ध्यान केन्द्रित किया गया। व्यक्ति स्तर के विश्लेषण में मानव प्रकृति और इस प्रकार से निर्णय करने की प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले मनोवैज्ञानिक और जैविक कारकों का विश्लेषण किया है। इन सब विभिन्न स्तरों से बढ़कर है राष्ट्रवाद जोकि आज भी सबसे सशक्त बल है। नृजातीय राष्ट्रवाद और आत्म-निर्णय अधिकार बीसवीं शताब्दी के आरम्भिक वर्षों में प्रमुख रहा जो आज भी सशक्त बल है और जिसे सोवियत संघ के विघटन तथा विश्व के आर्थिक रूप से एकजुट हो जाने के कारण शीतयुद्ध के बाद के वर्षों में नए रूप में वैधता प्राप्त हुई है। इस इकाई में युद्ध के आदर्शवादी, यथार्थवादी और मार्क्सवादी दृष्टिकोणों का वर्णन किया गया जो युद्ध के अप्रत्यक्ष कारणों अथवा राज्यों के संकट का व्यवहार का आवंटन करने में उपयोगी हैं।

4.10 अभ्यास प्रश्न

1) युद्ध की परिभाषा दीजिए।

2) युद्ध के कारणों के संबंध में प्रणाली स्तरीय सिद्धान्त क्या है?

3) युद्ध के कारणों के संबंध में राज्य स्तरीय सिद्धान्त क्या है?

4) युद्ध के कारणों के संबंध में व्यक्ति स्तरीय सिद्धान्त क्या है?

5) आदर्शवादियों की दृष्टि में युद्ध क्या है?

6) यथार्थवादियों की दृष्टि में युद्ध क्या है?

7) युद्ध के संबंध में मार्क्सवादी विचारधारा क्या है?

8) राष्ट्रवाद के महत्व का वर्णन कीजिए।